बिगड़ते पर्यावरण का परिणाम

इन दिनों पूर्वोत्तर बिहार के लगभग सभी जिलों में भीषण बाढ़ की स्थिति है। उससे भी ज्यादा चिंता की बात यह है कि जिन नदियों से यह बाढ़ आई है वे सामान्य तौर पर बाढ़ लाने के लिए नहीं जानी जातीं। राज्य के किशनगंज , कटिहार, पूर्णिया और अररिया जिलों से होकर बहने वाली कनकई, रतवा, बकरा, परमान, नूना और मउराहां जैसी भोली-भाली नदियों ने जो रौद्र रूप दिखाया है , वह अप्रत्याशित है। सवाल है कि ऐसा क्यों हो रहा है?

दरअसल, यह हिमालय के बिगड़ते पर्यावरण का ही नतीजा है। यह प्राकृतिक घटना नहीं , बल्कि मानव निर्मित आपदा है। विस्तृत अध्ययन से पता चलता है कि पिछले कुछ वर्षों में नेपाल स्थित हिमालय के जंगलों में हो रही वृक्षों की अंधाधुंध कटाई इसकी सबसे बड़ी वजह है। इससे हिमालय में भू-अपरदन बढ़ रहा है जिसके परिणामस्वरूप उत्तर बिहार और उत्तर प्रदेश की नदियों में गाद की मात्रा में बहुत तेज वृद्धि हो रही है। नदियों की गहराई तेजी से घट रही है और पानी वहन करने की उनकी क्षमता दिनोंदिन कम होती जा रही है। कुछ वर्ष पहले तक जो नदियां महीनों की बारिश से भी नहीं उफनती थीं आज महज दो दिन की तेज बारिश से ही तटबंधों को तोड़ दे रही हैं।

वैसे बढ़ते तापमान के कारण हिमालय के हिमनद (ग्लेशियर) और उसकी पारिस्थितिकी पर मंडरा रहे खतरे को लेकर विशेषज्ञ पहले से ही चिंता जता रहे हैं। चीन के राष्ट्रीय मौसम विभाग के प्रमुख और अंतरराष्ट्रीय ख्याति के मौसम वैज्ञानिक झेन गुओगुमांग ने कुछ साल पहले एक अनुसंधान के हवाले से कहा था कि बढ़ते तापमान के कारण हिमालय के ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं। इसके कारण हिमालय से निकल कर भारत में बहने वाली नदियों में पहले बाढ़ आएगी और बाद में ये नदियां सूख जाएंगी। लेकिन हिमालय के जंगलों की कटाई और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाले पर्यावरण और पारिस्थितिकी के संकट की ओर अभी तक ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया है, जबकि रिकार्ड बताते हैं कि नेपाल स्थित हिमालय के जंगल हर दिन सिकुड़ रहे हैं।

नेपाल सरकार के वन विभाग से मिली जानकारी के मुताबिक , वहां जंगल का क्षेत्रफल 270 हेक्टेअर प्रतिदिन की दर से घट रहा है। पिछले सत्रह वर्षों में वहां जंगल के क्षेत्रफल में 11 लाख 81 हजार हेक्टेअर की कमी हुई है। पिछले चार-पांच वर्षों में जंगल के सफाये की दर में भारी वृद्धि हुई है और यह 2.5 फीसद प्रतिवर्ष की रफ्तार से कम हो रहे हैं। वर्ष 2005 से 2007 की अवधि में वहां कुल सात लाख हेक्टेअर जंगल खत्म कर दिए गए। इस मसले पर नेपाल के वन विभाग के एक पूर्व महानिदेशक ने कुछ समय पहले इस लेखक से कहा था , 'हिमालय के जंगलों को अवैध तरीके से कब्जा किया जा रहा है और जंगलों में बस्तियां बसाई जा रही हैं। जंगलों पर माफियाओं का कब्जा बढ़ता जा रहा है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई हो रही है और इसे देश-विदेश के बाजारों में बेचा जा रहा है।'

गौरतलब है कि माओवादियों के विद्रोह के दौरान नेपाल के जंगलों से वन विभाग के कार्यालय हटा लिये गए थे। कुल चौहत्तर जिला वन कार्यालयों में से चालीस को माओवादियों ने ध्वस्त कर दिया था और जंगल के अधिकांश हिस्से सरकार के नियंत्रण से बाहर चले गए थे। इसके बाद तो नेपाली जंगलों पर सशस्त्र गिरोहों का कब्जा हो गया , जो आज भी जारी है। रौताहाट , कैलाली, बांके, नवलपरासी, कंचनपुर, चुरू, सिरहा, बारा, सप्तरी, मोरंग और सुनसरी जैसे जिलों के जंगलों के अधिकांश हिस्से आज भी सरकारी नियंत्रण से बाहर हैं।

पूर्वी नेपाल के एक जिले के वन अधिकारी कहते हैं , 'सुनसरी, सप्तरी, मोरंग, कंचनपुर और नवलपरासी, चुरू और दादेलधुरा के पचहत्तर प्रतिशत जंगल साफ हो गए हैं। ' उक्त वन अधिकारी आगे बताते हैं , 'नेपाल की लकड़ियां तिब्बत , भूटान, बिहार, उत्तर प्रदेश से लेकर चीन के शहरों तक पहुंच रही हैं। तिब्बत में बनने वाले लगभग हर घर में नेपाल की लकड़ी लग रही है। इसके अलावा अब भी नेपाल के अस्सी प्रतिशत से ज्यादा लोगों के रसोई ईंधन का स्रोत हिमालय की लकड़ियां ही हैं। इसके कारण भी जंगलों पर दबाव बढ़ रहा है।'

नेपाल में जंगलों की स्थिति किस कदर दयनीय हो गई है , इसका अंदाजा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि पिछले दिनों वहां वन विभाग के एक विशेषज्ञ दल ने सरकार को सुझाव दिया कि वन संरक्षण के लिए प्रस्तावित संविधान में प्रावधान किए जाए। दल ने कहा कि संवैधानिक प्रावधानों द्वारा यह सुनिश्चित हो कि देश के चालीस प्रतिशत हिस्से में हमेशा जंगल मौजूद रहे।

उल्लेखनीय है कि नेपाल के जंगल , उत्तर बिहार और उत्तर प्रदेश से होकर बहने वाली दर्जनों छोटी-बड़ी नदियों का जल-संग्रहण क्षेत्र हैं। जल-संग्रहण के इन इलाकों से जैसे-जैसे वृक्ष खत्म हो रहे हैं वैसे-वैसे भू-अपरदन की रफ्तार तेज हो रही है। वैसे भी मध्य हिमालय की चट्टान काफी कमजोर और भूरभुरी मिट्टियों वाली है और इसकी दक्षिण की ओर तीखी ढलान है। इसका परिणाम यह होता है कि

हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं से अपरदित होने वाले खरबों टन बालू , कंकड़, चट्टान, मिट्टी और कीचड़ सीधे-सीधे उत्तर बिहार और उत्तर प्रदेश की नदियों में गिर रहे हैं और नदी की गहराई को कम करते जा रहे हैं।

हालांकि हाल के वर्षों में किसी भी सरकारी या गैर-सरकारी संस्था ने इन नदियों में गादों की बढ़ती दर पर कोई विस्तृत शोध नहीं किया है, लेकिन कई भूगर्भशास्त्रियों और अभियंताओं का मानना है कि इसमें अपूर्व वृद्धि हो रही है। नेपाल के पूर्व जल संसाधन मंत्री और 'नेपाल वाटर कंजरवेशन फाउंडेशन' के अध्यक्ष और नामी अभियंता दीपक ग्यावली कहते हैं, 'सिर्फ कोसी नदी में प्रतिवर्ष लगभग एक हजार लाख घनमीटर गाद जमा हो रही है और हर वर्ष इसकी मात्रा में बढ़ोतरी रही है। इस कारण नदी का तल आसपास के धरातल से औसतन पांच फीट ऊंचा हो गया है।' गौरतलब है कि 1982 में एमएस कृष्णन ने कोसी की गाद पर एक अध्ययन किया था और पाया था कि इसमें प्रतिवर्ष सौ लाख घनमीटर गाद जमा हो रही है। इसका अर्थ यह हुआ कि पिछले छब्बीस-सत्ताईस वर्षों में इसमें दस गुना की वृद्धि हुई है।

हिमालय से निकलने वाली नदियों की गाद पर आइआइटी कानपुर के भू-विज्ञान विभाग ने हाल ही में एक अनुसंधान किया है। इसके मुताबिक बढ़ती गाद के कारण गंगा नदी दुनिया की सबसे ज्यादा गाद ढोने वाली नदी बनती जा रही है। इसके कारण गंगा की गहराई कम हो रही है। इसमें से बहुत सारी गाद उसकी सहायक नदियों द्वारा ही पहुंच रही है। उल्लेखनीय है कि पिछले कुछ वर्षों में बिहार के मोकाम से लेकर भागलपुर के बीच गंगा के व्यवहार में एक बदलाव देखा जा रहा है। इस पट्टी में गंगा की चौड़ाई लगातार बढ़ रही है और उसके नए-नए प्रवाह-मार्ग विकसित हो रहे हैं। पिछले साल ही इसके कारण बिहार के खगड़िया और नौगछिया और भागलपुर के पास सैकड़ों गांव नदी में विलीन हो गए थे।

ऐसा नहीं कि गाद की बढ़ती मात्रा के कारण सिर्फ बाढ़ का ही खतरा है , बल्कि इससे आने वाले समय में भयानक भूगर्भीय और तापमान वृद्धि के खतरे भी उत्पन्न हो सकते हैं। कई भूगर्भ वैज्ञानिकों का मानना है कि अत्यधिक गाद आने के कारण गंगा के मैदानी इलाके में भू-स्खलन के खतरे उत्पन्न होंगे। स्थलाकृतियों में असंतुलन आएगा जिससे भूकम्प की आशंका बढ़ेगी। सबसे बड़ी बात यह कि हिमालय के सतत अपरदन के कारण नेपाल , भूटान, उत्तर भारत, तिब्बत और बांग्लादेश के मानसून पैटर्न भी बदल सकते हैं। इस मसले पर रांची विश्वविद्यालय के भूगर्भ विज्ञानी नीतीश प्रियदर्शी कहते हैं , 'हिमालय के भूगोल और पारिस्थितिकी के बदलाव का असर बहुत व्यापक होगा। इसके कारण बाढ़ से लेकर भूकम्प तक आ सकते हैं और ये इलाके भौगोलिक तौर पर अस्थिर हो सकते हैं।'

यह विचित्र है कि जब पूरी दुनिया पर्यावरण असंतुलन और तापमान वृद्धि के खतरे से निपटने के लिए वन संरक्षण और वृक्षारोपण अभियान पर जोर दे रही है , तो नेपाल में जंगलों की कटाई चरम पर है। इससे भी हैरत की बात यह कि अभी तक भारत समेत विश्व समुदाय का ध्यान इस ओर नहीं गया है, जबकि पर्यावरण असंतुलन को लेकर वैश्विक स्तर पर जो शोध हो रहे हैं उनसे पता चल रहा है कि जीवों की संख्या में लगातार हो रही कमी की सबसे बड़ी वजह प्राणियों के अधिवास क्षेत्र में हो रही कमी है।

हाल में ही जुलोजिकल सोसायटी आफ लंदन और डब्लूडब्लूएफ ने अपने एक संयुक्त शोध में कहा है कि पिछले चालीस वर्षों में विश्व-स्तर पर कशेरूकी प्राणियों (वर्टब्रेट एनीमल) की संख्या में बावन प्रतिशत कमी आई है। इस मामले में एशिया-प्रशांत क्षेत्र दूसरे स्थान पर है। शोध में कहा गया है कि जीवों की संख्या में हो रही कमी के कारण धरती की पारिस्थितिकी बिगड़ेगी , जिसका दुष्परिणाम मानव समाज को भी झेलना पड़ेगा। हिमालय की पर्वत श्रृंखला हजारों प्रजातियों का अधिवास क्षेत्र है। हालांकि इस पर कोई आधिकारिक सर्वेक्षण उपलब्ध नहीं है कि बीते वर्षों में हिमालय की वनस्पति और जीवों की संख्या और मौजूदगी में क्या अंतर आया है , लेकिन इसमें संदेह नहीं कि समृद्ध जैव-विविधता वाली इस पर्वतश्रृंखला का पर्यावरण इसी तरह बिगड़ता रहा तो आने वाले समय में भारतीय उपमहाद्वीप गंभीर पारिस्थितिकी संकट की चपेट में होगा।

जनसत्ता (नई दिल्ली), 22August 2016